पल्लव कालीन कला : ऐतिहासिक विवेचन

सोनी कुमारी

भारतीय वास्तु और मूर्तिकला के विकास में दक्षिण भारत के पल्लव राजवंश का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। यहाँ पर 600 ई. के मध्य से 900 ई. तक पल्लव साम्राज्य रहा, जिसकी राजधानी काँची (कांचीवरम्) थी, जो पल्लव शासकों के समय एक प्रसिद्ध बन्दरगाह तथा व्यापारिक एवं सांस्कृतिक केन्द्र था, किन्तु आजकल यह नगर उजड़ गया है। पल्लव के शासन काल में कूरम, पनमैल, महाबलीपुरम्, आदि अनेक स्थानों पर कला का संवर्धन हुआ। महाबलीपुरम् और कांचीपुरम् में द्रविड़ शैली के प्रारम्भिक मन्दिर पाये गये हैं। महाबलीपुरम् जिसे मामल्लपुरम् भी कहा जाता है जहाँ तीन प्रकार के मन्दिर बने। –रथ' 'मण्डप' तथा 'रचना प्रधान'। रथ मन्दिर के स्वरूप पर ध्यान दिया जाए तो समुद्र के तट पर स्थित चट्टानों को ऊपर से तराश कर मन्दिरों को रूप दिया गया था। इन्हें रथ मण्डपम कहा जाता है। पहले ये पाँच पाण्डवों के नाम पर थे, किन्तु खराब वातावरणीय परिस्थिति के कारण ये नष्ट हो गये। ये रथ मण्डप आयताकार थे। गर्भगृह के ऊपर छोटे–छोटे शिखर थे, जो पिरामिड युक्त थे। छतें ढोलाकार और स्तूपिका जैसे आमलक से अलंकृत थी। शैल मण्डपम तट से थोड़ा हटकर पहाड़ को तराश कर गुहा मन्दिर बनाये गये। इसके समीप ही एक विशाल चट्टान को तराशकर 'महाभारत के आख्यान' उत्कीर्ण किये गये। गजलक्ष्मी, गंगावतरण, दुर्गा आदि का अंकन उल्लेखनीय था। रचना प्रधान मन्दिरों का निर्माण महाबलीपुरम् के पत्थरों को तराश कर किया गया। समुद्रतट पर बनाये मन्दिर 'शोर टेम्पुल' हैं जो दो मन्दिरों के समूह में है। एक शिव दूसरा विष्णु का। यह द्वितल मन्दिर है। शिखर सीढ़ीदार तथा शीर्ष स्तूपिका द्वारा अलंकृत है। ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर यह माना जाता है कि इस समय के सभी मन्दिर विशाल चट्टानों को काटकर बनाये गये हैं। इन मन्दिरों के प्रारम्भिक निर्माण का श्रेय सिंह विष्णु के कला प्रेमी पुत्र महेन्द्र वर्मन प्रथम (580–630 ई.) को दिया जाता है।